मछलियों के रोग एवं उपचार–

मछलियाँ भी अन्य प्राणियों के समान प्रतिकूल वातावारण में रोगग्रस्त हो जाती है. रोग फैलते ही संचित मछलियों के स्वभाव में प्रत्यक्ष अंतर आ जाता है. फिर भी साधारणतः मछलियां रोग–व्याधि से लडने में पूर्णतः सक्षम होती है।

रोग ग्रस्त मछलियों के लक्षणः–

(1) बीमार मछली समूह में न रहकर किनारे पर अलग–थलग दिखाई देती है, वह षिथिल हो जाती है.

(2) बेचैनी, अनियंत्रित तैरती हैं।

(3) अपने शरीर को बंधान के किनारे या पानी में गड़े बाँस के ठूँठ से बार–बार रगड़ना।

(4) पानी में बार–बार कूद कर पानी को छलकाना।

(5) मुँह खोलकर बार–बार वायु अन्दर लेने का प्रयास करना।

(6) पानी में बार–बार गोल–गोल धूमना।

(7) भोजन न करना।

(8) पानी में सीधा टंगे रहना। कभी–कभी उल्टी भी हो जाती है।

(9) मछली के शरीर का रंग फीका पड़ जाता है। चमक कम हो जाती है तथा शरीर पर श्लेष्मिक द्रव के स्त्राव से शरीर चिपचिपा चिकना हो जाता है।

(10) कभी–कभी आँख, शरीर तथा गलफड़े फूल जाते है।

(11) शरीर की त्वचा फट जाती है तथा उससे खून लगता है।

(12) गलफड़े (गिल्स) की लाली कम हो जाना, उनमें सफेद धब्बों का बनना।

(13) शरीर में परजीवी का वास हो जाता है।

उपरोक्त कारणों से मछली की बाढ़ रूक जाती है तथा कालान्तर में तालाब में मछली मरने भी लगती है।

रोग के कारण–

(अ) रासायनिक परिवर्तनः– पानी की गुणवत्ता, तापमान, पी.एच. आँक्सीजन, कार्बन डाई आक्साइड आदि की असंतुलित मात्रा मछली के लिए घातक होती है.

(ब) मछली के वर्ज्य पदार्थ जल में एकत्रित होते जाते है व मछली के अंगों जैसे गलफडे, चर्म, मुखगुव्हा के सम्पर्क में आकर उन्हें नुकसान पहुँचाते हैं.

(स) कार्बनिक खाद, उर्वरक या आहार आवष्यकता से अधिक दिए जाने से विषैली गैसे उत्पन्न होते है जो नुकसान दायक होती है.

(द) बहुत से रोगजनक जीवाणु व विषाणु पानी में रहते है जब मछली प्रतिकूल परीस्थिति में कमजोर हो जाती है तो जीवाणु/विषाणु उस पर आक्रमण करके रोग ग्रसित कर देते हैं.

प्रमुखतः रोगों को चार भागों में बांट सकते हैं–

(1) परजीवी जनित रोग

(2) जीवाणु जनित रोग

(3) विषाणु जनित रोग

(4) कवक (फंगस) जनित रोग

परजीवी जनित रोग

आंतरिक परजीवी, मछली के आंतरिक अंगों जैसे से शरीर गुहा, रक्त नलिका, वृक्क आदि में रोग फैलाते है होते है जबकि बाह्य परजीवी मछली के चर्म,गलफडो, पंखों आदि को रोग ग्रस्त करते हैं.

1. ट्राइकोडिनोसिस–

लक्षण– यह बीमारी ट्राइकोडीना नामक प्रोटोजोआ परजीवी से होती है जो मछली के गलफडो व शरीर के बाह्य सतह पर रहता है. संक्रमित मछली में षिथिलता, भार में कमी तथा मरणासन्न अवस्था आ जाती है. गलफडों से अधिक श्लेष्म श्रावित होने से श्वसन में कठिनाई होती है.

उपचार–निम्नर सायनों के घोल में संक्रमित मछली को 1–2 मिनिट डूबाकर रखा जाता है.

1. 1.5 प्रतिषत सामान्य नमक घोल
2. 25 पी.पी.एम. फार्मेलिन
3. 10 पी.पी.एम. काँपरसल्फेट (नीला थोथा) घोल

2. माइक्रो एवं मिक्सोस्पोरीडिएसिस–

लक्षण– माइक्रोस्पोरीडिएसिस रोग मुख्यतः अंगुलिका अवस्था में अधिक होता है ये कोषिकाओं में तन्तुमय कृमिकोष बनाकर रहते है तथा उत्तको को भारी क्षति पहुंचाते है मिक्सोस्पोरीडिएसिस रोग मछली के गलफडों व चर्म को संक्रमित करता है.

उपचार– इनकी रोकथाम के लिए कोई औषधि पूर्ण लाभकारी सिद्ध नहीं हुई है. अतः रोग ग्रस्त मछली को बाहर निकाल देते हैं मत्स्य बीज संचयन के पूर्व चूना, व्लीचिंग पावडर से पानी को रोगाणुमुक्त करते हैं.

3. सफेद धब्बेदार रोग–

लक्षण– यह रोग इक्थियोथिरिस प्रोटोजोन द्वारा होता है इसमें मछली की त्वचा, पंख व गलफडों पर छोटे सफेद धब्बे हो जाते है. ये उत्तकों में रहकर उतको को नष्ट कर देते हैं.

उपचार– 0.1 पी.पी.एम. मेलाकाइट ग्रीन + 50 पी.पी.एम. फार्मलिन में 1.2 मिनिट तक मछली को डूबाते हैं.

पोखर में 15 से 25 पी.पी.एम. फार्मेलिन हर दूसरे दिन रोग समाप्त होने तक डालते हैं.

4. डेक्टाइलो गाइरोसिस व गाइरो डेक्टाइलोसिस–

लक्षण– यह कार्प एवं हिंसक मछलियों के लिए घातक हैं. डेक्टाइलोगायरस मछली के गलफडों को संक्रमित करते है इससे ये बदरंग, शरीर की वृद्धि में कमी व भार में कमी जैसे लक्षण दर्षाते हैं.

गाइरोडेक्टाइलस त्वचा पर संक्रमित भाग की कोषिकओं में धाव बना देता है जिससे शल्को का गिरना, अधिक श्लेषक एवं त्वचा बदरंग हो सकती है.

उपचार– 1 पी.पी.एम. पोटेषियम परमेगनेट के घोल में 30 मिनिट तक रखते हैं

1. 1:2000 का ऐसिटिक एसिड के धोल एवं 2 प्रतिषत नमक धोल मे बारी–बारी से 2 मिनिट के लिए डूबावें.
2. तालाब में मेलाथियाँन 0.25 पी.पी.एम. सात दिन के अंतर में तीन बार छिड़कें.

5. आरगुलौसिस–

लक्षण–यह रोग आरगुलस परजीवी के कारण होता हैयह मछली की त्वचा पर गहरे धाव कर देते हैं जिससे त्वचा पर फफूंद व जीवाणु आक्रमण कर देते हैं व मछलियां मरने लगती है.

उपचार–

1. 500 पी.पी.एम.पोटेषियम परमेगनेट के धोल में 1 मिनिट के लिए डूबाए.

0.25 पी.पी.एम. मेलेथियाँरन को 1–2 सप्ताह के अंतरराल में 3 बार उपयोग करें.

जीवाणु जनित रोग

6. काँलमनेरिस रोग–

लक्षण– यह फ्लेक्सीबेक्टर काँलमनेरिस नामक जीवाणु के संक्रमण से होता है, पहले शरीर के बाहरी सतह पर व गलफडो मे धाव होने शुरू हो जाते हैं फिर जीवाणु त्वचीय उत्तक में पहुंच कर धांव कर देते है.

उपचार–

1. संक्रमित भाग में पोटेषियम परमेगनेट का लेप लगाए.
2. 1–2 पी.पी.एम. काँपर सल्फेट का धोल पोखरों में डालें.

7. बेक्टीरियल हिमारैजिक सेप्टीसिमिया–

लक्षण– यह मछलियों में ऐरोमोनाँस हाइड्रोफिला व स्युडोमोनास फ्लुरिसेन्स नामक जीवाणु से होता है. इसमें शरीर पर फोडे, तथा फैलाव आता है, शरीर पर फूले हुए धाव हो जाते है जो त्वचा व मांसपोषियों में हुए क्षय को दर्षाता है, पंखों के आधार पर धाव दिखाई देते हैं।

उपचार–

1. पोखरों में 2–3 पी.पी.एम. पोटेषियम परमेगनेट का धोल डालना चाहिए.
2. टेरामाइसिन को भोजन के साथ 65–80 मि.ग्राम प्रति किलोग्राम भार से10 दिन तक लगातार दें.

8. ड्राँप्सी–

लक्षण– यह उन पोखरों में होता है जहां पर्याप्त भोजन की कमी होती है. इसमें मछली का धड़ उसके सिर के अनुपात में काफी पतला हो जाता है और दुर्बल हो जाती है. मछली जब हाइड्रोफिला नामक जीवाणुं के

सम्पर्क में आती है तो यह रोग होता है. प्रमुख लक्षण शल्कों का बहुत अधिक मात्रा में गिरना तथा पेट में पानी भर जाता है.

उपचार–

1. मछलियों को पर्याप्त भोजन देना व पानी की गुणवत्ता बनाए रखना.
2. पोखर में 15 दिन के अंतरराल में 100 कि.ग्राम प्रति हेक्टर की दर से चूना डालें.

9. एडवर्डसिलोसिस–

लक्षण– इसे सडकर गल जाने वाला रोग भी कहते हैं, यह एडवर्डसिला टारडा नामक जीवाणु से होता है. प्राथमिक रूप से मछली दुर्बल हो जाती है,षल्क गिरने लगते है फिर पेषियों मे गैस से फोडे बन जाते हैं. चरम अवस्था में मछली से दुर्गन्ध आने लगती है।

उपचार–

1. सर्वप्रथम पानी की गुणवत्ता की जांच कराना चाहिए.
2. 0.04 पी.पी.एम. के आयोडीन धोल में 2 धंटे के लिए मछली को रखना चाहिए.

10. वाइब्रियोसिस–

लक्षण– यह रोग विब्रिया प्रजाति के जीवाणुओं से होता है, इसमें मछली को भोजन के प्रति अरूचि होने के साथ–साथ रंग काला पड़ जाता है, मछली अचानक मरने भी लगती है.

यह मछली की आंखों को अधिक प्रभावित करता है व सूजन के कारण आंख बाहर निकल आती है व सफेद धब्बे पड़ जाते हैं.

उपचार– आंक्सीटेट्रासाईक्लिन तथा सल्फोनामाइड को 8–12 ग्राम प्रति किलोग्राम भोजन के साथ मिलाकर देना चाहिए.

11. फिनरॉट एवं टेलरॉट–

लक्षण– यह रोग ऐरोमोनॉस फ्लुओरेसेन्स, स्युडोमोनॉस फ्लुओरेसेन्स तथा स्युडोमोनॉस पुटीफेसीन्स नामक जीवाणु के संक्रमण से होता है, इसमें मछली के पक्ष एवं पूंछ सड़कर गिरने लगते हैं. बाद में मछलियां मर जाती है.

उपचार–

1. पानी की स्वच्छता आवष्यक है.
2. एमेक्विल औषधि 10 मि.ली. प्रति सौ लीटर पानी में मिलाकर संक्रमित मछली को 24 घंटे तक घोल में रखना चाहिए.

कवक/फफूंद जनित रोग

आंद्रता के बढ़ने पर विषेषकर वर्षा ऋतु के प्रारंभ होते ही वातावरण में फफूंद के जीवाणु फैलने लगते हैं मछली के अंडे, स्पान तथा नवजात षिषु तथा धायल बड़ी मछलियां फफूंद से जल्दी संक्रमित हेाते हैं। वास्तव में फफूंद द्वितीय रोगजनक है जो अनुकूल मौसम में शरीर के धायल अंगों पर आश्रय पाकर फलते–फूलते हैं

12.सेप्रोलिग्नीयोसिस–

सेप्रोलिग्नीयोसिस पैरालिसिका नामक फफूंद से होता है जाल चलाने तथा परिवहनके दोरान मत्स्य बीज के धायल हो जाने से फफूंद धायल शरीर पर चिपक कर फैलने लगता है तथा त्वचा पर सफेद जालीदार सतह बनाता है। यह सबसे धातक रोग है।

लक्षण–

1. जबडें फूल जाते हैं अंधापन आने लगता है।
2. पैक्टोरलफिन एवं काँडलफिन के जोड़ पर खून जमा हो जाता है।
3. रोगग्रस्त भाग पर रूई के समान गुच्छे उभर आते है।
4. मछली कमजोर तथा सुस्त हो जाती है।

उपचार–

3 प्रतिषत नमक का धोल या1:1000 भाग पोटाष के धोल या 1:2000 कैल्षियम सल्फेट के धोल में 5 मिनट तक डुबोने तथा इस रोग के समाप्त होने तक दोहराने से लाभ होता है।

13. ब्रेकियोमाइसिस–

इसका आक्रमण गलफडो पर होता है, जिससे गलफड़े रंगहीन हो जाते हैं जो कुछ समय उपरांत सड़–गल कर गिर जाते हैं।

उपचार–

1. 250 पी.पी.एम. का फार्मिलिन धोल बनाकर मछली को स्नान दें।
2. 3 प्रतिषत सामान्य नमक के धोल में मछली को विषेषकर गलफड़ो को धेाना चाहिए।
3. जल का 1–2 पी.पी.एम. काँपर सल्फेट (नीला थोथा) से उपचार करना चाहिए।
4. पोखर में 15–25 पी.पी.एम. की दर से फार्मिलिन डालें।

विषाणु(वायरस) जनित रोग

14.एपीजुएटिक अलसरेटिव सिण्ड्रोम (ई.यू.एस.)

गत 22 वर्षो से यह रोग महामारी के रूप में भारत में फैल रहा है। सर्वप्रथम यह रोग 1983 से त्रिपुरा राज्य में प्रविष्ट हुआ तथा वहां से सम्पूर्ण भारत वर्ष में फैल गया। वर्षा काल के बाद ठीक ऋतु के प्रारंभ में सर्वप्रथम तल में रहने वाली सँवल, मांगूर ,सिंघी बाँम, सिंधाड़, कटरंग तथा स्थानीय छोटी छिलके वाली मछलियां इस रोग से प्रभावित होती है। कुछ ही समय में पालने वाली कार्प मछलियां जैसे– कतला, रोहू तथा मिरगल मछलियां भी इस रोग की चपेट में आ जाती है।

इस महामारी के प्रारंभ में मछली की त्वचा पर जगह जगह खून के धब्बे उभरते हैं जो बाद मे चोट के गहरे धावों में तबदील हो जाते है तथा उनसे खून निकलने लगता है। चरम अवस्था में हरे लाल धब्बे बढ़ते हुए पूरे शरीर पर यहां वहां कर गहरे अलसर में परिणीत हो जाता है। विषेष रूप से सिर तथा पूंछ के पास वाले भाग पर । पंख तथा पूंछ गल जाती है तथा अततः शीध्र ब्यापक पैमाने पर मछलियां मर कर किनारे दिखाई देने लगती है।

कारण–

यह रोग पोखर ,जलाषय तथा नदी में रहने वाली मछलियों में फैल सकता है, परन्तु इस रोग का प्रकोप खेती की जमीन के समीपवर्ती तालाबों में ज्यादा देखा गया है, जहां वर्षा के पानी में खाद , कीटनाषक इत्यादि घुलकर तालाब में प्रवेष करते है। साधरणतः कीटनाषक के प्रभाव से मछली की रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। पानी मे प्रदूषण अधिक होने पर अमोनिया का प्रभाव बढ़ जाता है तथा पानी में आक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है। यह परिस्थिति इस रोग के बैक्टिरिया के लिए अनुकूल होती है, जिससे ये तेजी से बढ़ते है तथा प्रारंभ में त्वचा पर धब्बे के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं जोकालांतर में गहरे अलसर का रूप धारण कर लेते हैं।

इस रोग के फैलने में अनेक कारक अपना योगदान देते है, जिसमें वायरस , बैक्टिरिया तथा फँगस (फफूंद) प्रमुख है।

बचाव के उपाय–

1. पूर्व में रोगग्रस्त प्रजनकों जो बाद में भले ही स्वस्थ्य हो जाते हैं ऐसे प्रजनकों से मत्स्य बीज उत्पादित नहीं करना चाहिए।
2. तालाब के किनारे यदि कृषि भूमि है तो तालाब के चारों ओर बाँध बना देना चाहिये, ताकि कृषि भूमि का जल सीधे तालाब में प्रवेष न करें।
3. वर्षा के बाद जल का पी.एच. देखकर या कम से कम 200 किलो चूने का उपयोग करना चाहिए।
4. शीत ऋतु के प्रारभिक काल में आँक्सीजन कम होने पर पम्प, ब्लोवर से पानी में आँक्सीजन को प्रवाहित करना चाहिए।

प्रति एकड़ 5 किलो मोटे दाने वाला नमक डालने से कतला व अन्य मछलियों को वर्षा पश्चात् मछली में अन्य होने वाले रोग से सुरक्षा की जा सकती है।

उपचार–

1. अधिक रोगग्रस्त मछली को तालाब से अलग कर देना चाहिए तथा तालाब में कली का चूना (क्विक लाइम) जो कि ठोस टुकड़ो में हो 600 किलो प्रति हेक्टर/मीटर की दर से जल में तीन सप्ताहिक किष्तों में डालने से रोग तीन सप्ताह में नियंत्रित हो जाती है।
2. चूने के उपयोग के साथ–साथ व्लीचिंग पाउडर 1 पी.पी.एम. अर्थात् 10 किलो प्रति हेक्टर/मीटर की दर से तालाब में डाला जाना कारगर सिद्ध होता है। कम मात्रा में या छोटे पोखर में मछली ग्रसित हो तो पोटेषियम परमेग्नेट 0.5 से 2.0 पी.पी.एम. के धोल में 2 मिनट तक स्नान लगातार 3–4 दिन तक कराने से लाभ होता है।
3. सिफेक्स– केन्द्रीय स्वच्छ जल संवर्धन संस्थान (सीफा) भुवनेष्वर के वैज्ञानिकों ने अल्सरेटिव सिन्ड्रोम के उन्मूलन हेतु दवा बनाई है जो एक्वावेट लेबारेटरीज राँची द्वारा बेची जाती है। प्रति हेक्टर/ मीटर 1 लीटर की दर से पानी का उपचार आवष्यकतानुसार किया जा सकता है। प्रति लीटर इसका मूल्य रू. 950/– के लगभग है।

पी. पी. एम. की गणना कैसे करेंगें

पी. पी. एम. अर्थात् पार्टस पर मिलियन अर्थात् भाग प्रति दस लाख

1 पी. पी. एम. अर्थात् एक धनफुट पानी में 0.283 ग्राम दवाई

कुल मात्रा ग्राम में = जलक्षेत्र की लम्बाई (मीटर में) X जलक्षेत्र की चौड़ाई (मीटर में) X
जलक्षेत्र की गहराई (मीटर में) X डोज पी. पी. एम.

नोटः– एक हेक्टेयर मीटर जलक्षेत्र अर्थात् एक मीटर गहरे एक हेक्टेयर जलक्षेत्र में 1 पी. पी एम. हेतु 10 किलो ग्राम दवा लगेगी।

या

1 पी.पी. एम. अर्थात् एक लीटर पानी में 0.0001 ग्राम दवाई

या

1 पी.पी. एम. अर्थात् एक गैलन पानी में 0.0083 ग्राम दवाई

.....0.....